[2019] 9 एस.सी.आर. 1009

आर लक्ष्मीकांतम

बनाम

देवराजी

(2018 की दीवानी अपील सं. 2420)

10 जुलाई, 2019

[आर. एफ. नरीमन और सूर्या कान्त, न्यायमूर्तिगण]

अनुबंध – विशिष्ट पालन – पक्षकारों के मध्य वादग्रस्त संपत्ति के विक्रय हेतु 3.65 लाख रुपये में एक अनुबंध संपादित हुआ – वादी ने अनुबंध पर हस्ताक्षर किए जाने की तिथि को 5000 रुपये का भुगतान किया – तत्पश्चात उसने 60000 रुपये का अतिरिक्त भुगतान किया – अनुबंध की धारा 3 के अनुसार शेष विक्रय मूल्य का भुगतान अनुबंध की तिथि से 3 माह के भीतर किया जाना था – अनुबंध की धारा 5 के अनुसार विक्रेता को बंधक का निपटान कर बंधकधारी से वादग्रस्त संपत्ति के मूल स्वामित्व दस्तावेज प्राप्त करने थे – वादी का आरोप था कि प्रतिवादी अनुबंध से पल्ला झाड़ने का प्रयास कर रहा था और उसने अनुबंध की शर्तों के पालन हेतु प्रतिवादी को 3 नोटिस भेजे (2 पत्र तथा 1 विधिक नोटिस) – विचारण न्यायालय ने विशिष्ट पालन का आदेश पारित किया – प्रथम अपील निरस्त कर दी गई – द्वितीय अपील में उच्च न्यायालय ने अधीनस्थ न्यायालयों के समवर्ती निर्णयों को पलटते हुए यह निर्णय दिया कि समय अनुबंध का सार था और वादी द्वारा भेजे गए पत्र सिद्ध नहीं हुए – अपील में अभिनिर्धारितः उच्च न्यायालय कई आधारों पर त्रुटिपूर्ण था – प्रथम, यह मानना कि समय अनुबंध का सार था, पूर्णतः गलत था – विक्रय अनुबंध की धारा 3 को धारा 5 और 8 के साथ पढ़ा जाना आवश्यक है, जो यह स्पष्ट रूप से दर्शाती हैं कि पारस्परिक प्रतिज्ञाओं की प्रकृति में, धारा 5 के अंतर्गत विक्रेता द्वारा की गई प्रतिज्ञा का पहले पालन किया जाना था, अर्थात बंधक का निपटान कर बंधकधारी से स्वामित्व के मूल दस्तावेज प्राप्त किए जाने थे – द्वितीय, दोनों पत्र प्रतिवादी को उसी पते पर संबोधित किए गए थे जिस पते पर उसने बाद में विधिक सूचना प्राप्त किया और उसकी स्वीकृति दी – इसके अतिरिक्त, उच्च न्यायालय ने यह मानने में भी त्रुटि की कि वादी अनुबंध के पालन के लिए तत्पर और इच्छुक नहीं था – परिणामस्वरूप, उच्च न्यायालय का निर्णय अपास्त किया गया और अधीनस्थ न्यायालयों का निर्णय पुनः स्थापित किया गया।

अपील स्वीकार करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारितः 1. उच्च न्यायालय ने द्वितीय अपील में अनेक पहलुओं पर त्रुटि की है। सर्वप्रथम, यह मानना कि अनुबंध में समय का तत्व अनिवार्य था, पूर्णतः गलत है। विक्रय के लिए किए गए अनुबंध की धारा 3 को धारा 5 तथा धारा 8 के साथ पढ़ा जाना आवश्यक है, जो यह स्पष्ट रूप से दर्शाती हैं कि पारस्परिक प्रतिज्ञाओं की प्रकृति में, धारा 5 के अंतर्गत विक्रेता द्वारा की गई प्रतिज्ञा का पहले पालन किया जाना था, अर्थात् बंधक का निपटान किए जाने के पश्चात् बंधकधारी से स्वामित्व के मूल दस्तावेज प्राप्त किए जाने थे। केवल इसके पश्चात् ही 70000 रुपये से अधिक की राशि, जो विक्रय के लिए शेष प्रतिफल राशि है, का भुगतान किया जाना था। द्वितीयतः, उच्च न्यायालय द्वारा यह कहना कि 18.12.2002 तथा 19.12.2002 के दो पत्र सिद्ध नहीं हुए, पूर्णतः गलत है। दोनों पत्र पंजीकृत ए.डी. पत्र थे, जो प्रतिवादी के उसी पते पर भेजे गए थे, जिस पते पर प्रतिवादी ने दिनांक 07.07.2003 के विधिक नोटिस की प्राप्ति स्वीकार की थी। इसके अतिरिक्त, जैसे ही कोई पंजीकृत पत्र भेजे जाने के पश्चात् इस टिप्पणी के साथ वापस आ जाता है कि प्राप्तकर्ता ने उसे प्राप्त नहीं किया, तो यह माना जाएगा कि वह पत्र उक्त पते पर प्रतिवादी को तामील हो गया है, जब तक कि इसके विपरीत कोई प्रमाण प्रस्तुत न किया जाए। प्रतिवादी ने यह दर्शाने हेतु कुछ भी प्रस्तुत नहीं किया कि उक्त पता सही नहीं था। वस्तुतः, यह तथ्य कि वही सही पता था, इस बात से सिद्ध होता है कि प्रतिवादी ने उसी पते पर दिनांक 07.07.2003 के विधिक नोटिस की प्राप्ति स्वीकार की। [कंडिका 9] [1014-डी-एच]

2. उच्च न्यायालय का यह कहना भी सही नहीं है कि तत्परता और इच्छा का अनुमान नहीं लगाया जा सकता, क्योंकि 18.12.2002 तथा 19.12.2002 के पत्र प्रतिवादी को नहीं भेजे गए थे। उच्च न्यायालय ने यह मानने में भी त्रुटि की कि आवश्यक धनराशि उपलब्ध होने के बावजूद वादी को तत्पर और इच्छुक नहीं माना जा सकता। उपर्युक्त परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय द्वारा वाद दायर करने में हुई अल्प देरी को वादी की तत्परता और इच्छा के अभाव के रूप में मानना भी गलत था। [कंडिका 10] [1014-एच; 1015-ए]

3. उच्च न्यायालय ने यह कहने में भी त्रुटि की कि विक्रय अनुबंध के समय संपत्ति का मूल्य 10 लाख रुपये था। अभियोजन साक्षी-1 ने अपने प्रतिपरीक्षण में यह स्वीकार किया कि उसका मूल्य उस तिथि को 10 लाख रुपये था, जिस तिथि को अभियोजन साक्षी-1 का

प्रतिपरीक्षण हुआ। विक्रय अनुबंध की तिथि पर संपत्ति का मूल्य केवल 6 लाख रुपये था, और पक्षकारों के लिए यह पूर्णतः खुला था कि वे उक्त मूल्य को ऊपर या नीचे की ओर वार्ता के माध्यम से तय करें, जो कि वर्तमान प्रकरण के तथ्यों में पक्षकारों द्वारा किया भी गया। अतः इस गलत धारणा से कि किसी मूल्यवान संपत्ति को अत्यंत कम मूल्य पर बेचा गया, कोई निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता। [कंडिका 11][1015-ई-जी]

मैडेमसेट्टी सत्यनारायणा बनाम जी. येलोजी राव और अन्य **ए.आई.आर 1965 एस.सी. 1405:[1965] 2 एस.सी.आर. 221-संदर्भित।**

<u>मामला कानून संदर्भ</u>

[1965] 2 एस.सी.आर. 221 निर्दिष्ट कंडिका 10

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2018 की दीवानी अपील सं. 2420

2011 की दूसरी अपील संख्या 592 में मद्रास उच्च न्यायालय के दिनांक 03.022017 के न्यायिक निर्णय और आदेश से

अपीलकर्ता के लिए : डॉ. पूजा झा, डॉ. आर. प्रकाश, सुश्री नंदिता झा, विश्व पाल सिंह, अधिवक्ता

न्यायालय का निर्णय इनके द्वारा दिया गया था

आर. एफ. नरीमन, न्यायमूर्ति

1. वर्तमान अपील में, नोटिस की तामील के बावजूद, उत्तरदाता की ओर से कोई भी उपस्थित नहीं हुआ। हमने अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता डॉ. (सुश्री) पूजा झा को सुना।

2. वर्तमान अपील में, उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय दिनांक 03.02.2017 द्वारा अधीनस्थ न्यायालयों के समवर्ती निर्णयों को अपास्त कर दिया तथा तत्कालीन प्रतिवादी, जो कि हमारे समक्ष उत्तरदाता है, की अपील स्वीकार की और इस प्रकार वादी के पक्ष में पारित विशिष्ट प्रदर्शन का डिक्री आदेश अपास्त कर दिया।

3. विक्रय हेतु अनुबंध दिनांक 22.09.2002 के द्वारा, वाद-संपत्ति को 3,65,000 रुपये की राशि में बेचा जाना था। अनुबंध की कुछ धाराएँ महत्वपूर्ण हैं, जिन्हें नीचे उद्धृत किया जा रहा हैः

> "1. अनुसूची में वर्णित संपत्ति का विक्रय मूल्य 3,65,000/- (रुपये तीन लाख पैंसठ हजार मात्र) होगा।
>
> 2. द्वितीय पक्षकार ने अग्रिम के रूप में नकद 5,000/- (रुपये पांच हजार मात्र) की राशि का भुगतान किया है तथा प्रथम पक्षकार इसके प्राप्त होने को स्वीकार एवं अभिस्वीकृत करता है।
>
> 3. शेष विक्रय प्रतिफल राशि द्वितीय पक्षकार द्वारा प्रथम पक्षकार को आज की तिथि से तीन माह के भीतर अदा की जाएगी। जिस दिन शेष विक्रय प्रतिफल राशि का भुगतान किया जाएगा, उसी दिन प्रथम पक्षकार विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए सहमत है।
>
> 4. द्वितीय पक्षकार 60,000/- (रुपये साठ हजार मात्र) की राशि, जो विक्रय प्रतिफल का एक भाग है, 10 अक्टूबर की तिथि को या उससे पूर्व प्रथम पक्षकार को अदा करने के लिए सहमत है।
>
> 5. प्रथम पक्षकार ने संपत्ति के मूल स्वामित्व दस्तावेज बंधकधारी को सौंप दिए हैं तथा द्वितीय पक्षकार बंधक ऋण का निपटान करेगा, बंधकधारी से उक्त दस्तावेज प्राप्त करेगा और उन्हें अपनी अभिरक्षा में रखेगा।"

.....

.....

> 8. यदि अनुसूची संपत्ति पर कोई भार नहीं है और द्वितीय पक्षकार शेष विक्रय प्रतिफल राशि का भुगतान करने के लिए तत्पर है, तो प्रथम पक्षकार द्वितीय पक्षकार या उसके नामित व्यक्ति के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित करेगा। यदि प्रथम पक्षकार ऐसा करने से इंकार करता है, तो द्वितीय पक्षकार विधिक कार्यवाही करने का हकदार होगा।"

4. यह कहा गया है कि विक्रय अनुबंध के समय वाद-संपत्ति का मूल्य लगभग 6 लाख रुपये था, किंतु अंततः पक्षकारों के बीच सहमति बनी और विशेष रूप से उतरदाता ने उक्त संपत्ति को 3.65 लाख रुपये में विक्रय करने पर सहमति व्यक्त की। विक्रय हेतु अनुबंध के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि यद्यपि धारा 3 में यह अपेक्षित है कि शेष विक्रय प्रतिफल राशि अनुबंध की तिथि से तीन माह के भीतर अदा की जाएगी और विक्रेता उसी दिन विक्रय विलेख निष्पादित करेगा जिस दिन शेष विक्रय प्रतिफल राशि का भुगतान किया जाएगा, तथापि धाराएँ 5 और 8 स्पष्ट रूप से दर्शाती हैं कि मूल स्वामित्व दस्तावेज, जो बंधकधारी के पास थे, अभी तक सौंपे नहीं गए थे और बंधक अभी तक विमोचित नहीं किया गया था। केवल इसके संपन्न होने के उपरांत ही धारा 3 प्रभावी होती, जिससे यह स्पष्ट है कि तीन माह की अवधि किसी भी प्रकार से अनुबंध का मूल तत्व नहीं थी।

5. अनुबंध के शीघ्र पश्चात, वादी ने प्रतिवादी के वर्तमान पते पर दिनांक 18.12.2002 को एक पंजीकृत पत्र भेजा, जिसमें प्रतिवादी को यह स्मरण कराया गया कि अनुबंध पर हस्ताक्षर के दिन 5,000 रुपये प्राप्त किए गए थे तथा 14.10.2002 को 60,000 रुपये प्राप्त किए गए थे। इसके बावजूद, मूल स्वामित्व दस्तावेज बंधकधारी से प्राप्त नहीं किए गए और परिणामस्वरूप बंधक का निर्वहन नहीं किया जा सका। उक्त पत्र में आगे यह उल्लेख किया गया कि बार-बार संपर्क किए जाने के बावजूद कोई कार्रवाई नहीं की गई और यह भी कहा गया कि वादी शेष राशि के साथ तैयार है तथा उतरदाता को तत्काल आगे आकर बंधक का निर्वहन करना चाहिए, बंधकधारी से सभी दस्तावेज प्राप्त करने चाहिए और विक्रय विलेख का पंजीकरण कराना चाहिए। यह पंजीकृत ए.डी. पत्र प्रेषक को यह टिप्पणी करते हुए वापस कर दिया गया कि प्राप्तकर्ता ने पिछले एक सप्ताह से पत्र प्राप्त नहीं किया। अगले ही दिन, अर्थात् 19.12.2002 को भेजे गए एक अन्य विधिक सूचना का भी यही हश्र हुआ। अंततः, 07.07.2003 को वादी ने एक विधिक सूचना भेजा, जिसमें 19.12.2002 के पूर्ववर्ती विधिक सूचना का उल्लेख करते हुए प्रतिवादी से अनुबंध की शर्तों का तत्काल पालन करने का आह्वान किया गया। इस सूचना को, जिसे प्रतिवादी ने स्वीकारोक्ति सहित उसी पते पर प्राप्त किया, कोई उत्तर नहीं दिया गया। इसके पश्चात, फरवरी 2005 में वादी द्वारा विशिष्ट प्रदर्शन के लिए वर्तमान वाद प्रस्तुत किया गया।

6. इन तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए, विचारण न्यायालय ने अपने निर्णय दिनांक 12.09.2008 द्वारा यह ठहराया कि वाद अनुबंध सिद्ध हो चुका है तथा वादी द्वारा भेजे गए तीनों सूचना भी सिद्ध हैं, और यह स्पष्ट है कि उतरदाता अनुबंध के अंतर्गत अपने दायित्वों

से बचने का प्रयास कर रहा था। यद्यपि वाद विलंब से दायर किया गया था, तथापि विचारण न्यायालय का मत था कि चूँकि प्रतिवादी ने अपने बंधकधारी का पता नहीं दिया और न ही बंधक के निर्वहन हेतु कोई कदम उठाया, इसलिए यह स्पष्ट है कि वह अनुबंध से मुकरने का प्रयास कर रहा था। इसके अतिरिक्त, वादी की तत्परता और इच्छाशक्ति इस तथ्य से सिद्ध होती है कि उसके पास अनुबंध की तिथि को तथा उसके पश्चात भी आवश्यक धनराशि उपलब्ध थी, जैसा कि उसने अपने पत्र दिनांक 18.12.2002 में उल्लेख किया था। ऐसी स्थिति में, न्यायालय ने विशिष्ट प्रदर्शन का आदेश पारित किया, क्योंकि शेष विक्रय प्रतिफल राशि वाद दायर किए जाने की तिथि को ही न्यायालय में जमा कर दी गई थी। उक्त निर्णय के विरुद्ध दायर प्रथम अपील को प्रधान जिला न्यायाधीश द्वारा दिनांक 20.12.2010 को खारिज कर दिया गया। जिला न्यायाधीश ने सभी विवादित बिंदुओं पर वादी के पक्ष में समवर्ती निष्कर्ष निकाले और इस प्रकार प्रथम अपील को खारिज कर दिया।

7. आक्षेपित निर्णय द्वारा, उच्च न्यायालय ने समवर्ती निर्णयों को पलटते हुए यह माना कि अनुबंध की व्याख्या के अनुसार, चूँकि विक्रय लेन-देन को पूर्ण करने के लिए केवल तीन माह का समय दिया गया था, अतः समय अनुबंध का मूल तत्व था। उच्च न्यायालय ने यह भी माना कि दिनांक 18.12.2002 तथा 19.12.2002 के दोनों पत्र प्रतिवादी को तामील किए गए नहीं माने जा सकते और इस कारण वे सिद्ध नहीं हुए। उच्च न्यायालय ने प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता के इस कथन को अभिलेखित किया कि वह अन्य पहलुओं पर विचार नहीं कर रहा है, सिवाय इसके कि वादी विक्रय अनुबंध के निष्पादन हेतु सर्वदा तत्पर और इच्छुक नहीं था। इसके बावजूद, उच्च न्यायालय ने यह कहा कि चूँकि वाद स्वयं विलंब से दायर किया गया था, अतः मात्र यह प्रदर्शित करना पर्याप्त नहीं था कि वादी के पास आवश्यक धनराशि उपलब्ध थी। यह भी आवश्यक था कि वह यह सिद्ध करे कि वह अन्यथा भी निरंतर तत्पर और इच्छुक था, जिसे सही नहीं माना जा सकता, विशेष रूप से इस तथ्य को देखते हुए कि दिनांक 22.09.2002 और 07.07.2003 के मध्य लंबा अंतराल था, क्योंकि मध्यवर्ती पत्र अथवा सूचना सिद्ध नहीं हुए। उच्च न्यायालय ने आगे यह भी कहा कि विक्रय अनुबंध की तिथि पर संपत्ति का मूल्य 10 लाख रुपये था, जबकि यह प्रतिवादी द्वारा सिद्ध नहीं किया गया था, और तत्पश्चात यह निष्कर्ष निकाला कि चूँकि तत्परता और इच्छाशक्ति वादी के विरुद्ध मानी जानी चाहिए और चूँकि वाद स्वयं विलंबित था, अतः इस प्रकरण के तथ्यों में विशिष्ट प्रदर्शन प्रदान नहीं की जा सकती और, जैसा कि पूर्व में कहा गया, अधिनस्थ न्यायालयों के समवर्ती निष्कर्षों को पलट दिया गया।

8. हमने अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुना।

9. उच्च न्यायालय ने द्वितीय अपील में स्पष्ट रूप से अनेक बिंदुओं पर त्रुटि की है। प्रथम, यह कहना कि अनुबंध में समय मूल तत्व था, सर्वथा अनुचित है। धारा 3 को धाराएँ 5 और 8 के साथ पढ़ा जाना आवश्यक है, जो स्पष्ट रूप से यह दर्शाती हैं कि परस्पर प्रतिज्ञाओं की प्रकृति में, धारा 5 के अंतर्गत विक्रेता द्वारा की गई प्रतिज्ञा का पहले पालन किया जाना आवश्यक था, अर्थात् बंधक के निर्वहन के पश्चात बंधकधारी से स्वामित्व दस्तावेज प्राप्त किए जाने थे। केवल उसके पश्चात ही 70,000 रुपये से अधिक की शेष विक्रय प्रतिफल राशि, जो विक्रय की शेष राशि थी, अदा की जानी थी। द्वितीय, उच्च न्यायालय का यह कहना कि दिनांक 18.12.2002 और 19.12.2002 के दोनों पत्र सिद्ध नहीं माने जा सकते, पूर्णतः त्रुटिपूर्ण है। दोनों पत्र पंजीकृत स्वीकृति सहित उसी पते पर भेजे गए थे, जिसे प्रतिवादी स्वयं वह पता मानता है, जिस पर उसे दिनांक 07.07.2003 का विधिक सूचना प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त, जैसे ही एक बार पंजीकृत पत्र भेजे जाने के पश्चात उपर्युक्त टिप्पणियों सहित वापस किया जाता है, तो उसे उक्त पते पर प्रतिवादी को तामील माना जाएगा, जब तक कि इसके विपरीत कुछ सिद्ध न किया जाए। प्रतिवादी ने यह दर्शाने के लिए कुछ भी प्रस्तुत नहीं किया कि यह उचित पता नहीं था। वास्तव में, यह तथ्य कि यही उचित पता था, इस बात से सिद्ध होता है कि उतरदाता ने दिनांक 07.07.2003 के विधिक सूचना की प्राप्ति को इसी पते पर स्वीकार किया।

10. उच्च न्यायालय का आदेश इस निष्कर्ष में सही नहीं है कि तत्परता और इच्छाशक्ति का अनुमान इसलिए नहीं लगाया जा सकता क्योंकि दिनांक 18.12.2002 तथा 19.12.2002 के पत्र प्रतिवादी को भेजे नहीं गए थे। उच्च न्यायालय ने यह मानने में भी त्रुटि की कि आवश्यक धनराशि उपलब्ध होने के बावजूद वादी को तत्पर और इच्छुक नहीं कहा जा सकता। उपर्युक्त परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय ने वाद दायर करने में हुई अल्प अवधि की देरी को वादी के विरुद्ध यह कहने हेतु प्रयोग करने में भी त्रुटि की कि वह तत्पर और इच्छुक नहीं था। भारत में यह विधि का स्थापित सिद्धांत है कि इंग्लैंड में विद्यमान न्यायसंगत सिद्धांत यहाँ लागू नहीं होता, और जब तक विशिष्ट प्रदर्शन हेतु वाद परिसीमा की अवधि के भीतर दायर किया गया है, तब तक मात्र देरी को वादी के विरुद्ध नहीं रखा जा सकता। इस संदर्भ में निर्णय *मदमसेट्टी सत्यनारायण बनाम जी. येल्लोजी राव तथा अन्य,* वायु 1965 सर्वोच्च न्यायालय 1405 (कंडिका 7) उल्लेखनीय है, जिसमें निम्नलिखित कहा गया हैः

"(7) श्री लक्ष्मय्या ने न्यायालय के विवेकाधिकार की परिधि को परिभाषित करने के लिए इंग्लैंड के अनेक निर्णयों का उल्लेख किया। उन पर संदर्भ करने से पूर्व, विशिष्ट प्रदर्शन के अनुतोष के संबंध में इंग्लैंड और भारत की दोनों प्रणालियों के बीच मूलभूत अंतर को समझना आवश्यक है। इंग्लैंड में विशिष्ट प्रदर्शन का अनुतोष न्यायसंगत क्षेत्र से संबंधित है; भारत में यह वैधानिक विधि के क्षेत्र में आता है। इंग्लैंड में उक्त अनुतोष हेतु वाद दायर करने की कोई परिसीमा अवधि नहीं है और इसलिए मात्र देरी —जो परिस्थितियों पर निर्भर करती है—अपने आप में अनुतोष से इन्कार करने हेतु पर्याप्त हो सकती है; किंतु भारत में मात्र देरी उक्त अनुतोष से इन्कार करने का आधार नहीं बन सकती, क्योंकि विधि परिसीमा अवधि निर्धारित करती है। यदि वाद समय के भीतर है, तो देरी विधि द्वारा अनुमोदित है; यदि वह समय से परे है, तो वाद कालबाह्य होने के कारण खारिज कर दिया जाएगा; दोनों ही स्थितियों में न्यायसंगतता का कोई प्रश्न उत्पन्न नहीं होता।"

11. उच्च न्यायालय ने यह कहने में भी त्रुटि की कि विक्रय अनुबंध की तिथि पर संपत्ति का मूल्य 10 लाख रुपये था। अभियोजन साक्षी-1 ने अपने प्रतिपरीक्षण में यह स्वीकार किया था कि यह मूल्य उस तिथि पर 10 लाख रुपये था, जब अ.सा.-1 का प्रतिपरीक्षण किया गया। विक्रय अनुबंध की तिथि पर संपत्ति का मूल्य केवल 6 लाख रुपये था, और पक्षकारों के लिए यह खुला था कि वे उक्त मूल्य को ऊपर या नीचे की ओर वार्ता द्वारा निर्धारित करें, जो कि वर्तमान प्रकरण के तथ्यों में पक्षकारों ने किया भी। अतः इस त्रुटिपूर्ण धारणा से कि एक मूल्यवान संपत्ति अत्यंत कम मूल्य पर बेची गई थी, कोई निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता।

12. इन समस्त कारणों से, हम अपील को स्वीकार करते हैं, उच्च न्यायालय के निर्णय को अपास्त करते हैं तथा अधिनस्थ न्यायालयों के निर्णय को पुनः बहाल करते हैं।

अपील की अनुमति दी गई।

अंकित ज्ञान

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त

व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।